M.A. Semester – III
Philosophy CC – 12
Unit – V

Dr. Ragini Kumari
Associate Prof. & Head
P.G. Centre of Philosophy
Maharaja College, Ara

व्याप्ति किसे कहते हैं ? व्याप्ति की स्थापना किन विधियों द्वारा की जाती है ? विवरण दें।

व्याप्ति अनुमान का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण अंग है जिसपर प्रत्येक अनुमानवादी का ध्यान आकर्षित हुआ है या यूँ कहें कि व्याप्ति अनुमान की तार्किक शर्त कहलाती है। व्याप्ति को साध्य और हेतु के बीच स्वभाविक सम्बन्ध माना गया है। पर यह स्वभाविक सम्बन्ध क्या है ? और कैसा है ? इसके विषय में दार्शनिकों में काफी मतभेद है इसलिए विभिन्न दार्शनिक-ग्रन्थों में, व्याप्ति के अनेक लक्षण तथा उसे गृहीत करनेवाले साधनों की गम्भीर विवेचना की गई है।

व्याप्ति का शाब्दिक अर्थ है – विशेष प्रकार का सम्बन्ध (व्यि + आप्ति)। साधारणतया हेतु और साध्य के नियमित रूप से साथ-साथ रहने को व्याप्ति कहा जाता है। हेतु और साध्य के नियमित रूप से साथ-साथ रहने को व्याप्ति कहा जाता है हेतु और साध्य के नियमित साहचर्य को व्याप्य-व्यापक भाव अथवा गम्य-गमक भाव सम्बन्ध कहा जाता है। इनमें से व्याप्ति के आश्रय अथवा व्यापक की अपेक्षा न्यून अथवा समान देश में रहनेवाले को व्याप्य तथा व्याप्य की अपेक्षा समान अथवा अधिक देश में रहनेवाले को व्यापक कहा जाता है जैसे – धूम के द्वारा अग्नि को सिद्ध करने के लिए जब अनुमान किया जाता है तब यह बात आवश्यक रूप से देखी जाती है कि धूम व अग्नि के साथ अविच्छेद या अटल सम्बन्ध है या नहीं। क्योंकि जब तक निश्चित रूप से यह नहीं जान लिया जाता कि धूम अग्नि के अभाव में कहीं

भी उत्पन्न नहीं हो सकता तब ही इस प्रकार की व्याप्ति जहाँ-जहाँ धूम होता है, वहाँ-वहाँ अग्नि होती है, बनायी जा सकती है। जिससे किसी वस्तु को सिद्ध किया जाता है, उसका उस वस्तु के साथ अटूट सम्बन्ध होना चाहिए। इसके विपरीत जो वस्तु सिद्ध की जाती है उसका इस प्रकार का सम्बन्ध हो अथवा न हो, यह आवश्यक नहीं है, जैसे अग्नि को सिद्ध करते समय यह आवश्यक नहीं समझा जाता कि उसका धूम के साथ अविच्छेद सम्बन्ध हो ही, क्योंकि जहाँ-जहाँ अग्नि होती है वहाँ-वहाँ धूम भी होता हो, यह आवश्यक नहीं। जहाँ हेतु और साध्य दोनों की व्याप्ति समान रहती है, वहाँ भी व्याप्ति का आश्रय हेतु ही माना जायेगा साध्य नहीं। इसलिए हेतु (धूम) और साध्य (अग्नि) के अनौपाधिक एवं नियत साहचर्य सम्बन्ध को व्याप्ति कहते हैं।

"हेतुसाध्ययोरनौपाधिको नियतः साहचर्य सम्बन्धो व्याप्तिः।"

व्याप्ति का ग्रहण व्यभिचाररहित साहचर्यदर्शन से होता है।

"व्यभिचारादर्शने सति सहचारदर्शनेन गृह्यते व्याप्तिः।"

इस प्रकार विभिन्न अनुमानवादियों के द्वारा व्याप्ति की व्याख्या की गई है अब हम व्याप्ति की स्थापना की विधियों का वर्णन करेंगे।

व्याप्ति की स्थापना न्यायदर्शन में छः विधियों द्वारा की गई है जो निम्नलिखित है—

(1) अन्वय (2) व्यतिरेक (3) व्यभिचाराग्रह
(4) उपाधिनिरास (5) तर्क (6) सामान्य लक्षण प्रत्यक्ष।

(1) <u>अन्वय विधि</u> — जब एक वस्तु के भाव से दूसरी वस्तु का भाव सदा प्रकट हो तो, इसे अन्वेय विधि कहा जाता है, जैसे- जहाँ-जहाँ धुआँ है वहाँ वहाँ आग है, यह पाश्चात्य तर्कशास्त्री मिल के method of agreement से मिलता है।

(2) व्यतिरेक — एक वस्तु के अभाव से दूसरी वस्तु का अभाव हो जाना व्यतिरेक कहा जाता है। जैसे — 'जहाँ-जहाँ आग नहीं है वहाँ-वहाँ धुआँ भी नहीं है' यानी एक वस्तु आग के नहीं रहने से दूसरी वस्तु धुआँ का भी नहीं रहना, व्यतिरेक कहलाता है।

(3) व्यभिचाराग्रह — दो वस्तुओं के बीच व्यभिचार का अभाव व्यभिचाराग्रह कहा जाता है। व्याप्ति सम्बन्ध की निश्चितता व्यभिचार के अभाव पर ही निर्भर करती है। जैसे धुआँ के साथ सदा आग का अनुभव किया जाता रहा है। आज तक कोई ऐसा स्थान देखने को नहीं मिला जहाँ धुआँ हो, पर आग नहीं। अतः इस अव्याघातक (uncontradicted experience) के बल पर ही कहते हैं कि जहाँ-जहाँ धुआँ होता है, वहाँ-वहाँ आग है।

(4) उपाधिनिरास — व्याप्ति सम्बन्ध के लिए अनौपाधिक सम्बन्ध का होना अत्यावश्यक है। दो घटनाओं का सम्बन्ध अगर किसी उपाधि पर निर्भर करे तो उनके बीच के सम्बन्ध को व्याप्ति सम्बन्ध नहीं कहा जा सकता। यदि कोई आग को देखकर धुआँ का अनुमान करे तथा दोनों के बीच व्याप्ति सम्बन्ध स्थापित करे तो उसमें दोष हो जायेगा। क्योंकि आग धुआँ को तभी पैदा करती है, जब जलावन गीली हो। अतः हम यह नहीं कह सकते हैं कि जहाँ-जहाँ आग है, वहाँ-वहाँ धुआँ है। इसके विपरीत यदि धुआँ को देखकर कोई आग का अनुमान करे तथा धुआँ और आग में व्याप्ति सम्बन्ध स्थापित करे तो यह न्यायसंगत होगा। क्योंकि धुआँ और आग के बीच अनौपाधिक सम्बन्ध है।

(5) तर्क — कुछ दार्शनिकों का कहना है कि अनुभव तो केवल वर्तमान तथ्य में ही सीमित है तो अनुभव पर आधारित व्याप्ति भविष्य में कैसे सही मानी जा सकती है? नैयायिक इस प्रकार के आपत्ति का उत्तर तर्क के द्वारा देते हैं। उनका कहना है कि "यदि सभी-धूमवान पदार्थ अग्नियुक्त है — असत्य है तो उसका पूर्ण विरोधी (contradictory) कथन कुछ धूमवान पदार्थ अग्नियुक्त नहीं है — अवश्य सत्य होगा। इसका आशय यह है कि दो पूर्ण विरोधी वाक्य एक ही साथ असत्य नहीं हो सकते। अब यह धूमवान, पदार्थ अग्नियुक्त नहीं है को सत्य मान लेने से धुआँ का अस्तित्व अग्नि के बगैर भी सम्भव हो जाता है इसका अर्थ यह हुआ कि कार्य की उत्पत्ति कारण के बिना भी हो सकती है किन्तु ऐसा मानना कार्य-कारण सिद्धान्त का खण्डन करना होगा। अतः इससे सिद्ध होता है कि धुआँ और आग में व्याप्ति सम्बन्ध है

(6) सामान्य लक्षण प्रत्यक्ष — व्याप्ति में पूर्ण निश्चयात्मकता लाने के लिए नैयायिक सामान्य लक्षण प्रत्यक्ष का सहारा लेते हैं। सामान्य लक्षण प्रत्यक्ष अलौकिक प्रत्यक्ष का एक भेद है इसके द्वारा किसी वस्तु या व्यक्ति के प्रत्यक्ष में उसकी जाति का भी प्रत्यक्ष हो जाता है। उदाहरण के लिए एक मनुष्य के प्रत्यक्ष में ही उसकी जाति मनुष्यत्व का भी हमें प्रत्यक्ष ज्ञान हो जाता है। मनुष्यत्व एवं मरणशीलता के बीच साहचर्य सम्बन्ध का प्रत्यक्ष करने के कारण ही हम, कहते हैं कि 'सभी मनुष्य मरणशील हैं'

इस प्रकार न्याय दर्शन में ~~व्याप्ति~~ व्याप्ति की स्थापना उपरोक्त ६: विधियों द्वारा की गई है हम पाते हैं कि भारतीय दर्शन में न्याय का

प्रधान योगदान उसका ज्ञानशास्त्र एवं तर्कशास्त्र है। भारतीय दर्शन के विरुद्ध प्रायः यह आलोचना की जाती है कि यह युक्ति प्रधान नहीं है क्योंकि यह आप्त वचनों पर आधारित है। किन्तु हम देखते हैं कि न्याय का ज्ञानशास्त्र एवं तर्कशास्त्र ऐसी आपत्तियों के लिए मुहँ तोड़ जवाब प्रस्तुत करता है।

X———————————X